डॉ० ओम प्रकाश आर्य
महाराजा कॉलेज, आरा

Date
Page

बी० ए० स्नातक सेमेस्टर - V
विषय - संस्कृत, MJC - VIII

तर्कसंग्रह (द्रव्य विवेचन)

जिसमें द्रव्यत्व जाति रहती है अथवा जो कार्यमात्र का समवायिकारण है उसको द्रव्य कहते हैं - 'द्रव्यत्व जातिमत्वं समवायिकारणत्वं वा द्रव्यसामान्य लक्षणम्'। द्रव्य नौ हैं - पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन।

1. पृथिवी - तत्र गन्धवती पृथिवी। सा द्विविधा - नित्या अनित्या च। उन नौ द्रव्यों में जिसमें गन्ध रहती है उसे 'पृथिवी' कहते हैं। पृथिवी दो प्रकार की होती है - नित्या और अनित्या। परमाणु रूप पृथिवी नित्या और कार्यरूप पृथिवी अनित्या है। शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से वह अनित्य पृथिवी पुनः तीन प्रकार की होती है। हमलोगों का शरीर पृथिवी का शरीर है। पृथिवी का इन्द्रिय, गन्ध को ग्रहण करने वाला 'घ्राण' है, जो कि नासिका के अग्रभाग में रहता है। पृथिवी का विषय मृत्तिका (मिट्टी) और पाषाण आदि है।

2. जल - शीतस्पर्शवत्य आपः। ता द्विविधाः - नित्या अनित्याश्च। नित्याः परमाणुरूपाः। अनित्याः कार्यरूपाः। पुनस्त्रिविधाः शरीरेन्द्रिय-विषयभेदात्। शीतल स्पर्श से युक्त 'जल' होता है। वह जल द्विविध होता है। नित्य (सर्वकाल भावी) और अनित्य (किसी विशेष समय में होनेवाला) नित्य जल परमाणु रूप होता है और कार्यरूप जल अनित्य होता है। शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से अनित्य जल तीन प्रकार का

होता है। जल शरीर रूप से वरुण लोक में निवास करता है। जल का इन्द्रिय, जो रस को ग्रहण करने वाला है, उसको 'रसन' कहते हैं वह जिह्वाग्र में विद्यमान होता है। जल का विषय नदी और समुद्र आदि है।

3. तेज - उष्णस्पर्शवत्तेजः। तच्च द्विविधं नित्यमनित्यं च। जो द्रव्य उष्ण स्पर्श से युक्त हो वह 'तेज' है। वह दो प्रकार का है- नित्य और अनित्य। नित्य तेज परमाणु रूप और अनित्य कार्य रूप होता है। अनित्य तेज शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से तीन प्रकार का होता है। तेज शरीर रूप से सूर्य लोक में निवास करता है। इन्द्रिय रूप को ग्रहण करने वाली चक्षुरिन्द्रिय है, जो कालीतारा (पुतली) के अग्रभाग में विद्यमान है। तेज का विषय भौम, दिव्य, उदर्य और आकरज भेद से चार प्रकार का होता है। अग्नि आदि (भौम) भूमि में रहने वाला तेज है। अप (जल) रूप इंधन वाले तेज को 'दिव्य' तेज कहते हैं, वह बिजली आदि है। खाये गये पदार्थ के परिणाम का कारण जो तेज है, उसे 'उदर्य' कहते हैं। 'आकरज' सुवर्ण आदि है।

4. वायु - रूपरहित स्पर्शवान्वायुः। स द्विविधो- नित्योऽनित्यश्च। रूपरहित तथा स्पर्श से युक्त वायु होती है। वह दो प्रकार की है- नित्य तथा अनित्य। नित्य वायु परमाणु रूप है और अनित्य कार्यरूप है। पुनः यह वायु शरीर, इन्द्रिय और विषय भेद से तीन प्रकार की होती है। वायु शरीर रूप से वायुलोक में

निवास करता है। इन्द्रिय स्पर्श को ग्रहण करने वाली त्वगिन्द्रिय है जो समस्त शरीर के अग्रभाग में है। विषय - वृक्षादि को कँपाने वाली पवन है। शरीर के अन्दर संचरण करने वाली वायु प्राण है। वह एक होने पर भी विभिन्न स्थानों में स्थिति के भेद से पाँच स्थानों में निवास करती है -

हृदि प्राणो गुदेऽपानः, समानो नाभिमण्डले।
उदानः कण्ठदेशस्थो, व्यानः सर्वशरीरगः॥

अर्थात् प्राण नामक वायु हृदय में, अपान नामक वायु गुदा में, समान नामक वायु नाभि मण्डल में, उदान नामक वायु कण्ठदेश में और व्यान नामक वायु समस्त शरीर में निवास करती है।

5. आकाश - शब्दगुणकमाकाशम्। एकं विभु नित्यं च। 'शब्द' गुण वाले द्रव्य का नाम आकाश है। वह एक है, विभु है और नित्य है। आकाश का लक्षण है - 'शब्दसमवायिकारणत्वम् आकाशत्वम्' अर्थात् जो शब्द समवायिकारण है, वह आकाश है। जिसमें समवाय सम्बन्ध से शब्द रहता है, वह आकाश है - समवायसम्बन्धेन शब्दाश्रयत्वं आकाशत्वम्। वह आकाश विभु अर्थात् समस्त मूर्त द्रव्यों का संयोगी है। विभु का लक्षण है - 'सर्वमूर्तद्रव्यसंयोगित्वं विभुत्वम्' अर्थात् जो सम्पूर्ण मूर्त द्रव्यों का संयोगी है, उसे 'विभु' कहते हैं। विभु चार हैं - आकाश, काल, दिक् और आत्मा। मूर्त का लक्षण है - 'क्रियावत्त्वं मूर्तत्वम्' अर्थात् जिसमें क्रिया रहती है, उसे 'मूर्त' कहते हैं। मूर्त द्रव्य पाँच हैं - पृथिवी, अप्, तेज, वायु और मन।

6. काल - अतीतादि व्यवहार हेतुः कालः। स एकोऽविभुर्नित्यश्च। अतीत आदि व्यवहार का जो कारण हो उसे 'काल' कहते हैं। वह एक है, विभु है और नित्य भी है। अतीत इत्यादि जो व्यवहार (अतीत, भविष्यत, वर्तमान) उसके असाधारण कारण को 'काल' कहते हैं। ~~व्यवहार~~ अतीत आदि व्यवहार का निमित्त कारण 'काल' है आकाश नहीं।

7. दिक - प्राच्यादि व्यवहार हेतुर्दिक्। सा चैका, विभ्वी नित्या च। प्राची आदि व्यवहार का जो कारण हो वह 'दिशा' है और वह एक, सर्वव्यापिनी तथा नित्य है।

8. आत्मा - ज्ञानाधिकरणमात्मा। स द्विविधः परमात्मा जीवात्मा च। तत्रेश्वरः सर्वज्ञः परमात्मा एक एव। जीवात्मा प्रतिशरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च। ज्ञान का जो आश्रय है, वह 'आत्मा' है। जीवात्मा और परमात्मा - आत्मा के दो भेद हैं। उनमें ईश्वर (समर्थ) और सर्वज्ञ परमात्मा तो एक ही है। जीवात्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न-भिन्न, सर्वव्यापक और नित्य है। आत्मा को ज्ञानाधिकरण कहा है। आत्मा में ज्ञान = बुद्धि गुण समवाय सम्बन्ध से है। गुणाश्रय होने से वह द्रव्य है तथा उसकी यही विशेषता उसे अन्य पदार्थों से भिन्न कर देती है। अतः आत्मा का बुद्धि असाधारण धर्म है। जीवात्मा और परमात्मा के भेद से आत्मा दो प्रकार का है। परमात्मा ईश्वर और सर्वज्ञ है जबकि जीवात्मा

विभु, नित्य और प्रत्येक प्राणी में पृथक्-पृथक् है। अमूर्त होने के कारण आत्मा केवल अनुमेय है।

9. मन- सुखाद्युपलब्धि साधनमिन्द्रियं मनः। तच्च प्रत्यात्मनियतत्वा दनन्तं परमाणुरूपं नित्यं च। जिसके द्वारा सुखादि गुणों का अनुभव प्राप्त किया जाए वह 'मन' इन्द्रिय है और वह प्रत्येक आत्मा से पृथक् रूप से सम्बद्ध होने से अनन्त होता है, परमाणु रूप होता है और अनन्त होता है। 'मन' जीवात्मा को सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म, संस्कार का अनुभव कराने का साधन है साथ ही करण (इन्द्रिय) है। मन की साधन एवं करण रूपी दोनों विशेषताएँ ही मन का असाधारण धर्म है। प्रत्येक जीवात्मा में मन पृथक्-पृथक् निवास करता है। अतः जीवात्माओं के असंख्य होने से मन भी असंख्य है।